ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-6* Issue-8* November-2021
Anthology : The Research

पुलिस प्रशासन और सामाजिक न्याय एक अध्ययन

Police Administration and Social Rights A Hearing

Paper Submission: 15/11/2021, Date of Acceptance: 23/11/2021, Date of Publication: 24/11/2021

नीरजा गुप्ता
असिस्टेंट प्रोफेसर,
राजनीति विज्ञान विभाग,
श्री के०के० जैन (पी०जी०) कॉलेज, खतौली,
मुजफ्फरनगर,
उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

मानवीय समाज अन्य समाजों से सभ्य एवं सुसंस्कृत माना गया है, पर अभावों से ग्रस्त मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु,अपने लोभ, मोह एवं स्वार्थ के वशीभूत होकर वैध अवैध मार्ग पर चलकर अपने ही समाज में अव्यवस्था उत्पन्न कर डालता है। समाज की इस अव्यवस्था की स्थिति को समाप्त करने और समाज के उद्दण्ड स्वभाव के सदस्यों को प्रताड़ित करके समाज को व्यवस्थित करने के लिये देश, काल एवं परिस्थितिजन्य कानूनों का निर्माण कर उत्पीड़ित सदस्यों को न्याय दिलाने का प्रयास करती हैं।

Human society is considered to be civilized and cultured from other societies, but a person suffering from scarcity creates disorder in his own society by following the lawful illegal path, being subjugated by his greed, attachment and selfishness, to fulfill his needs. To end this disorderly condition of the society and to organize the society by torturing the members of the arrogant nature of the society, they try to get justice to the oppressed members by creating country, time and circumstantial laws.

मुख्य शब्दः प्रशासन, पुलिस ,अत्याचार, अन्याय, शोषण, समानता, स्वतंत्रता, अपराध, अपराध नियंत्रण, अन्याय, सत्ता का विकेंद्रीकरण

Keywords: Administration, Police, Atrocities, Injustice, Exploitation, Equality, Freedom, Crime, Crime Control, Injustice, Decentralization of Power

प्रस्तावना

प्रशासन सभ्य समाज की प्रथम आवश्यकता है। इसके सम्बन्ध में समय-समय पर भारतीय एवं पाश्चात्य विचारकों ने अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। भारतीय विचारकों में मनु, कौटिल्य सोमदेव सूरि, शुक्र, कामन्दक आदि ने जहाँ प्रशासन के सम्बन्ध में स्वरचित ग्रन्थों में व्यापक एवं विस्तृत चर्चा की है वहीं पाश्चात्य विचारकों में मार्शल डिमॉक, लूथर गुलिक, साइमन, मार्क्स, एल० डी० हाइट, ई० एन० ग्लैडन, वुडरो विल्सन आदि के द्वारा भी विचार प्रकट किए गए हैं।

मनुस्मृति में भी वर्णित है कि उस काल में प्रशासन का सामान्य प्रकार होता था। मनु ने इसको गाँव से प्रारम्भ किया। प्रत्येक गाँव का एक मुखिया होता था।

सम्पूर्ण समाज में व्यवस्थित जीवन बनाए रखना, इस सहज ज्ञान की मूल प्रवृत्ति ने ही समुदाय में प्रशासन की भावना को जन्म दिया। प्रशासन मूलरूप में संस्कृत का शब्द है यह 'प्र' उपसर्ग पूर्वक शास् धातु से बना है इसका अर्थ है-प्रकृष्ट या उत्कृष्ट रीति से शासन करना

कुशल प्रशासन, सरकार का एकमात्र अवलम्ब है जिसकी अनुपस्थिति में राज्य क्षत-विक्षत हो जाएगा। मनु नहीं है परन्तु 'मनुसंहिता' इस समय जीवित है कौटिल्य तथा मैकियावली चाहे नही हों परन्तु उनके 'अर्थशास्त्र' तथा 'प्रिन्स' का आज भी उपयोग है। प्रशासन वह अक्षुण्ण धारा है जो देशकाल के सम्भव व असम्भव परिवर्तनों को अपने आंचल में लपेट कर प्रवाहित होती रहती है।

पुलिस प्रशासन, सामान्य प्रशासन का ही एक अंग है। देश में अमन, कानून व्यवस्था एवं स्थिरता बनाए रखने का दायित्व पुलिस विभाग पर निर्भर है। पुलिस प्रशासन को हम राज्य के एक कार्यपालक सार्वजनिक बल के रूप में परिभाषित कर सकते हैं। जनआक्रोश, हिंसा की बढ़ती हुई प्रवृत्ति, विभाजनात्मक प्रवृत्तियाँ, भ्रष्टाचार की समस्या आदि को समाप्त कर समाज में शक्ति एवं सुव्यवस्था स्थापित करना अपराध एवं आपराधिक प्रवृत्ति को रोकना है।

प्राचीनकाल में जिला स्तर पर एक अधिकारी की नियुक्ति की जाती थी जिसको 'विश्वपति', 'फौजदार', 'हॉकिम', 'आमिल' आदि विभिन्न कालों में अलग-अलग नाम से पुकारते थे यह अधिकारी समाज में कानून एवं व्यवस्था को बनाए रखने के लिए जिम्मेदार होता था।

वर्तमान समय में भी शक्ति एवं सुव्यवस्था बनाए रखने की जिम्मेदारी पुलिस प्रशासन पर ही है। पुलिस जनहित के आदेशों एवं समाज के व्यक्तियों की एवं उनकी सम्पत्ति की गैर-कानूनी कृत्यों से सुरक्षा करती है।पुलिस शब्द की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में दो विचारधारा मिलती है। पश्चिमी विद्वानों के कथनानुसार पुलिस शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन भाषा के 'पोलितिया' शब्द से हुई। लैटिन भाषा आर्य भाषा तथा यूरोप की भाषाओं से निकली है। पश्चिमी विद्वान् इस भाषा को 2000 वर्ष पुरानी मानते हैं जबकि प्राकृत, संस्कृत एवं पाली कम-से-कम 3000 वर्ष पुरानी हैं। अतएव लैटिन 'पोलितिया' शब्द भारतीय पौरूस अथवा पुरुष शब्द से निकला है। भले ही यूरोप वालों के लिए पुलिस शब्द लैटिन भाषा से आना हो परन्तु भारतीयों को

अभिमान होना चाहिए कि इस शब्द की रचना, सृष्टि, पुलिस तथा पुलिस संगठन की शुरुआत 'भारतवर्ष से हुई है और हमने ही संसार को पुलिस संगठने की शिक्षा दी।

सम्राट अशोक ने अनपे राज्यारोहण के 26वें वर्ष में जो आज्ञा प्रसारित की थी उसमें 'पुलिस'शब्द का स्पष्ट प्रयोग है|

'लजूका पि लंघति पटिचलिटवे मं पुलिसानि में छंदनानि ।' अशोक से पूर्व ईसा से साढ़े तीन सौ वर्ष पूर्व कौटिल्य ने पुलिस विभाग का नाम 'कंटकशोधक' रखा था। जो कर्मचारी समाज की रक्षा करता है वही शोधक 'पुलिस' कहलाता था।

'सामाजिक न्याय कल्याणकारी राज्य की संस्वीकृति है। यह समाज को निष्पक्ष रूप से व्यवस्थित करता है। कल्याणकारी राज्य का आदर्श है कि जन कल्याण के कार्यों को सुरक्षा एवं संरक्षण द्वारा प्रभावी ढंग से निरन्तर बढ़ाया जा सके।सामाजिक न्याय कल्याणकारी राज्य की संस्वीकृति है। यह समाज को निष्पक्ष रूप से व्यवस्थित करता है। कल्याणकारी राज्य का आदर्श है कि जन कल्याण के कार्यों को सुरक्षा एवं संरक्षण द्वारा प्रभावी ढंग से निरन्तर बढ़ाया जा सके।नेहरू जी का कहना था, "हमें ऐसा हिन्दुस्तान बनाना है जिसमें न गरीबी हो, न बेकारी। प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक न्याय मिले और आर्थिक विषमतायें कम हों।सामाजिक न्याय की अवधारणा के तीन आधार स्तम्भ है— स्वतन्त्रता, समानता और सुरक्षा।"सामाजिक न्याय" एक युग्म शब्द है यह दो विशेषणों से मिलकर बना है सामाजिक और न्याय "सामाजिक" का सामान्य अर्थ समाज से संबंधित स्थितियों से है तथा समाज का सामान्य अर्थ मनुष्यों के विभिन्न पारस्परिक सम्बन्धों की व्यवस्था के रूप में लिखा जाता है।यथा-पारिवारिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि प्रसिद्ध व्याकरणशास्त्री पाणिनी ने 'न्याय' शब्द को दो रूपों में परिभाषित किया है-सांसारिक और सामाजिक।

इन्टरनेशनल एन्साइक्लोपीडिया आफ सोशल सांइसेज के अनुसार "

1. न्याय सामूहिक और व्यक्तिगत रूप में सामाजिक बदलाव, कल्याण और सहायता पहुँचाने के कर्तव्य निश्चित करता है।
2. न्याय अपने विभिन्न निर्णयों में निष्पक्षता और सत्यता के पारस्परिक परिवर्तित अन्तः व्यक्तिगत आचरणों (जिसमें हिंसा के लिए सीमित प्रतिक्रिया सम्मिलितहै) और विभिन्न आर्थिक श्रेणी के सदस्यों के केवल मौलिक अधिकारों की समानता ही नहीं बल्कि राष्ट्रों जातियों के मध्य भी सम्बद्ध कार्य सम्बन्धी सिद्धान्तों को सम्मिलित करता है।
3. न्याय का भावनात्मक प्रकाशन उत्पीड़न के समस्त ये सवेगात्मक अविश्वास के रूप में होता है और इसका व्यवहारिक प्रकाशन स्वार्थ और क्रूरता के दोष स्थापित करने और उनका मुकाबला करने में होता है।

नागरिक स्वतन्त्रता के संरक्षक दार्शनिक प्लेटो के अनुसार-"स्वतन्त्रता और चारित्रिक व्यवस्था न्याय का अनुपालन है।"

इस प्रकार कह सकते हैं—"समाज के प्रत्येक व्यक्ति को जीवन की मूलभूत अनिवार्य आवश्यकताओं यथा- भोजन, वस्त्र एवं मकान की पूर्ति हो, प्रत्येक व्यक्ति को विकास का उचित अवसर मिले, व्यक्ति का व्यक्ति के द्वारा शोषण रोका जाये और आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो।

अध्ययन का उद्देश्य

अब प्रश्न यह उठता है कि वर्तमान समय में पुलिस प्रशासन का जो संगठन है क्या वह इतना सशक्त एवं पर्याप्त है कि वह वर्तमान समस्याओं का समाधान करने में सक्षम है? क्या पुलिस प्रशासन अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह ठीक प्रकार से कर रही है? पुलिस प्रशासन की वर्तमान व्यवस्था एवं संगठनात्मक ढाँचे से क्या जनता सन्तुष्ट है? इन सारे प्रश्नों को ध्यान में रखकर वर्तमान विषय का चयन किया गया। विश्वविद्यालयों और शोधपीठों में पुलिस संगठन एवं प्रशासन के सम्बन्ध में अध्ययनों का नितान्त अभाव है।

प्रायः देखा जा रहा है कि दिन-प्रतिदिन अपराधों में वृद्धि होती जा रही है तथा कानून व्यक्ति की है जिसका स्वाग व्यवस्था की स्थिति बिगड़ती जा रही है। इसके क्या कारण हो सकते हैं? इसका प्रमुख कारण लिस का मानववादी चेहर जनसंख्या वृद्धि, राजनीतिक हस्तक्षेप, राजनीति का अपराधीकरण, पुलिस प्रशासन पर राजनीतिक दबाव आदि है। साथ ही पुलिस प्रशासन, प्रशासन के कुछ पदाधिकारी भी जल्दी प्रोन्नति या मनचाहे स्थान पर स्थानान्तरण चाहते हैं। राजनेताओं की विशेष कृपा से यह कार्य आसानी से हो जाते हैं, बाद नवाधिकारों के बारे में - में यह राजनेता भी इन्हीं पदाधिकारियों से अपना स्वार्थ सिद्ध करवाते हैं।

पुलिस का मनोबल कमजोर होने की खास वजह राजनीति में अपराधियों की बढ़ती पैठ है। बेरोजगारी के कारण भी साक्षर नवयुवक अपराध की दुनिया को अपना रहे हैं वे आधुनिक उपकरणों की भरपूर मदद ले रहे हैं। सी०बी०आई० निदेशक डॉ० आर० के० राघवन ने भी कहा था कि अपराधी, राज्यों की पुलिस के मुकाबले अधिक साधन सम्पन्न हैं।'

भूतपूर्व पुलिस प्रमुख एन० एस० सक्सेना ने भी लिखा है कि अनुभव से यह पता चलता है कि मानववादी पुलिस प्रमुखों का स्थान मुख्यमन्त्रियों एवं केन्द्रीय गृहमन्त्रियों की निगाह में एक ऐसे व्यक्ति की है जिसका स्वागत नहीं है। वास्तविकता यही है कि राजनीतिक लाभ सर्वोपरि है और पुलिस का मानववादी चेहरा दूसरे या तीसरे स्थान पर भी नहीं है।

दिल्ली के पुलिस आयुक्त वेद मरवाह ने भी कहा है कि पुलिस सारे अभावों के होते हुए भी अपना कर्त्तव्य निभा रही है। इस बल के बहुसंख्यक सदस्यों के पास मूल सुविधाएँ भी नहीं है इनके मानवाधिकारों के बारे में कोई नहीं सोचता।

पुलिस जन का कहना है कि अपराध का कारण दिनोंदिन नैतिक मूल्यों में गिरावट, सामाजिक आदर्श का विलुप्तीकरण, सामाजिक सद्भाव में कमी, जातिवाद, साम्प्रदायवाद, लालफीताशाही आदि भी | पुलिस जन का कहना है कि वर्तमान साधन (स्टाफ, वाहन, हथियार, संचार)पर्याप्त एवं उपयुक्त नहीं है।

1. इसके अतिरिक्त अन्य व्यावहारिक कठिनाइयाँ है पुलिस ड्यूटी में अनियमितताएँ, आधुनिक संसाधनों का अभाव, सुविधाओं का अभाव, दोषपूर्ण न्यायिक प्रक्रिया, जनता का असहयोग, अधिकारियों एवं निम्न कर्मचारियों में सामंजस्य की कमी, अधिकारों की कमी, 1860 में निर्मित नियमों का लागू होना, कागजी कार्यवाही की अधिकता आदि।
2. पुलिस अधीक्षक संवर्ग के अधिकारियों पर स्ट्रेस (तनाव) दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है जिनसे उनका नेतृत्व प्रभावित होता है|
3. कार्य की अधिकता के कारण भी पुलिस कार्यों को वरीयता का क्रम गड़बड़ हो जाता है जैसे चुनाव में ड्यूटी, वी०आई०पी० सुरक्षा, घटना, हड़ताल, घेराव आदि।
4. संगठनात्मक स्तर पर भी पुलिस ढाँचे के पुनर्गठन का प्रश्न लम्बे समय से अपेक्षित है। पुलिस पद सोपान का निर्धारण पुलिस थानों की वर्तमान संरचना में आमूल-चूल परिवर्तन तथा मुख्यालय रेंज व जिला स्तरों में संगठनात्मक स्तर पर नई व्यवस्थाएँ लागू किया जाना बहुत जरूरी हो गया है।
5. कुछ पुलिस जन का मानना है कि हमारे यहाँ को न्याय प्रक्रिया दोषपूर्ण है इसमें इतनी अधिक जटिलताएँ है प्रायः अपराधी अपराध करने के बाद बच निकलते हैं। पंजीकृत आपराधिक मामलों की संख्या प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है परिणामस्वरूप पुलिस सभी मामलों की जाँच पूरी नहीं कर पाती।
6. न्यायिक प्रक्रियाओं को पूरा करने तथा उसकी सजा पाने में बहुत अधिक समय लगता है। इतने समय तक आरोपी विचाराधीन कैदी के रूप में निरुद्ध रहता है अनेक ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिसमें 10 आरोपी को जितनी सजा मिलती है उससे अधिक समय वह जेल में बिता चुका होता है। जैसे कृष्णा प्रसाद का मुकदमा|

पदोन्नति का आधार भी उचित होना चाहिए वर्तमान समय में पदोन्नति जाति या उच्च अधिकारियों को विशेष कृपा या राजनीतिक दबाव से हो रही है।

फील्ड में पुलिस कर्मियों के कार्य का समय निश्चित नहीं होता। वे कई-कई घण्टे कार्य करते हैं। राष्ट्रीय पुलिस आयोग ने भी अपनी प्रथम रिपोर्ट के पैरा 3-23 में राष्ट्रीय उत्पादक परिषद् के हवाले से लिखा कि निरीक्षक रैंक के नीचे के अधीनस्थ पुलिस कर्मों सप्ताह के सात दिन औसतन 10 से 16 घण्टे तक रोजाना कार्य करते हैं।

अनेक शोधों द्वारा यह साबित हुआ है कि दण्डरूपी नकारात्मक अनुप्राणक देने के मुकाबले पुरस्कार रूपी धनात्मक अनुप्राणक ज्यादा कारगर होता है लेकिन पुलिस विभाग में किसी गलती है लिए दण्ड को प्रक्रिया तुरन्त प्रारम्भ हो जाती है परन्तु जहाँ पुरस्कार देने की बात होती है वहाँ पहल या कोशिश पुरस्कार पाने वाले अधिकारी/कर्मी को ही करनी पड़ती है।

पुलिस जन का यह भी मानना है कि व्यावहारिक कठिनाइयों में हमारे लचीले कानून जिसके कारण अपराधी जल्द ही जमानत पर छूट जाता है या मुकदमे में बरी हो जाता है।

अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति जॉन कैनेडी के शब्दों में "पुलिस जन की सफलताओं का गुणगान नहीं किया जाता है परन्तु उनकी असफलताओं का ढिंढौरा अवश्य पीटा जाता है।"वर्तमान समय में लोग पुलिस प्रशासन की सही समीक्षा के स्थान पर उसकी एकागी आलोचना कर समस्त विभाग को आरोपो-प्रत्यारोपों से आच्छादित कर देते हैं जिससे पुलिस छवि दिन-प्रतिदिन धूमिल होती जा रही है।

भारतीय पुलिस के सम्बन्ध में यह टिप्पणी अत्यन्त सटीक प्रतीत होती कि अतीत को विरासत तथा वर्तमान की बढ़ती चुनौतियों के दो पाटें के बीच भारतीय पुलिस काफी विषम परिस्थितियों में फँसी है। उनकी त्रासदी यह है कि एक ओर यह इतिहास की कैदी है और दूसरी ओर सामाजिक परिवर्तनों की शिकार है।

पुलिस की निष्क्रियता का क्या कारण है? सामान्य जनता ने अनेक कारण बताए; जैसे संख्यात्मक कमी, वैज्ञानिक साधनों की कमी, राजनीतिक हस्तक्षेप, भ्रष्टाचार, बेईमानी, रिश्वतखोरी, पुलिसबल में कमी, संचार साधन, हथियार, वाहन की कमी ,सबसे बड़ा कारण राजनीतिक हस्तक्षेप है।

पुलिस बल को प्रभावशाली बनाने के सन्दर्भ में जनता ने अपने अग्रलिखित सुझाव भी प्रस्तुत किए हैं-राजनीतिक हस्तक्षेप को शीघ्रातिशीघ्र समाप्त किया जाए। भ्रष्ट राजनीतिज्ञों, माफिया आदि के विरुद्ध कठोर कार्यवाही हो। साथ ही, सरकारी वकील, जज आदि किसी भी लालच या दबाव में आकर उन्हें बेगुनाह साबित कर सीकंजों के अन्दर जाने से न रोके। भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरों, नशाखोरी, जातिवाद, भाई-भतीजावाद पूरी तरह समाप्त हो। पुलिस पक्षपात न करें, वेगुनाह को परेशान न करे तथा दोषी व्यक्ति को ही गिरफ्तार करें। दोषी पुलिस कर्मियों पर तत्काल कार्यवाही हो, भर्ती के साथ भ्रष्टाचार न हो, अत्याधुनिक संचार साधन, पुलिस कार्यशैली में सुधार एवं जल्दी-जल्दी स्थानान्तरण नहीं होने चाहिए। मानवाधिकार आयोग को प्रभावी बनाया जाए, जो व्यावहारिक त्रुटियाँ हैं उन्हें दूर किया जाए

जन सहभागिता बढ़ाई जाए, पुलिस कर्मियों के लिए रिफ्रेशर कोर्स की सुविधा दी जाए। उच्चाधिकारी गुप्त रूप से जनता के बीच जाकर स्वयं जानकारी ग्रहण करें।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि प्रथम तो सामान्य जन गरीबी, अशिक्षा, रूढ़िवादिता के कारण अपनी समस्याओं को अधिकारियों के समक्ष नहीं पहुँचा पाते हैं। द्वितीय, शिक्षित सामान्य जन सूचना द्वारा भी उच्च पुलिस अधिकारियों से मिलने में झिझकते हैं। पुलिस अधिकारी भी कार्य के बोझ के कारण निम्न स्तरीय कर्मचारियों का पक्ष, पद का अहं आदि के कारण नहीं सुनते एवं उनकी आकांक्षाओं को सन्तुष्ट नहीं कर पाते।

सामन्य जन का यह भी मानना है कि अगर अपराध पर नियन्त्रण करना है तो जनता को जागरूक एवं पुलिस को चतुर्दिक सहयोग देना अपरिहार्य है। क्योंकि बढ़ती हुई उपभोक्तावादी संस्कृति, पाश्चात्य संस्कृति की अन्धाधुन्ध होड़, निरन्तर दैत्याकार रूप ग्रहण करती जनसंख्या वृद्धि, बेरोजगारी, अशिक्षा आदि ऐसे कारण है जिससे लगातार अपराधों में वृद्धि हो रही है। हमारा पूरा समाज अनचाहे ढंग से अर्थ संचलन के क्षेत्र में जुट गया है। जहाँ पर "टका धर्मम् टका कर्मम् टकाहि परमं तपः" की भावना सर्वोपरि हो गई है। यही सब कारण है कि आज प्रातः प्राप्त होने वाले अखबार क्रूरतम और वीभत्स घटनाओं से भरे रहते हैं।

निष्कर्ष

अन्त में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि पुलिस की कार्य पद्धति एवं आचरण में सुधारों की आवश्यकता है और इसके लिए हमें आध्यात्मिक भाव से किए जाने वाले भागीरथी प्रयासों की आवश्यकता है। यदि ऐसा हो जाता है तो उसके बाद प्रतिवर्ष मैगसेसे पुरस्कार, सुश्री किरण बेदी की तरह, हमारे देश में आने से कोई नहीं रोक पाएगा और हम पुलिस स्तर की दौड़ में विश्व में अग्रणी हो जाएँगे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *कामन्दकीय नीतिसार, 13/45.*
2. *एस० एस० खेरा, डिस्ट्रिक्ट ऐडमिनिस्ट्रेशन इन इण्डिया*
3. *बी० एन० मल्लिक, पुलिस-एक दार्शनिक विवेचन, नई दिल्ली: यूनाइटेड इण्डिया प्रेस, 1970.*
4. *परिपूर्णानन्द वर्मा, भारतीय पुलिस, वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक।*
5. *स्तम्भ लेख, दिल्ली, शिवालक 4.*
6. *उत्तर प्रदेश पुलिस पत्रिका, जुलाई 1998.*
7. *एन० एस० सक्सेना, इण्डिया टुवर्डस डॉन इन लॉ एन आर्डर, 1985-94,*
8. *उत्तर प्रदेश पुलिस पत्रिका, दिसम्बर, 1997.*
9. *सण्डे टाइम्स, नई दिल्ली, 06-01-1997.*
10. *उत्तर प्रदेश पुलिस पत्रिका, फरवरी, 2000.*
11. *इण्डिया टुडे, मैगजीन, 19 अगस्त, 1998.*
12. *पुलिस विज्ञान, जनवरी-मार्च, 1999.*
13. *उत्तर प्रदेश पुलिस कमीशन, 1960-61, 1970-71.*
14. *राजाराम यादव, पुलिस अन्वेषण और अधियोजन।*
15. *सामाजिक न्याय और मानवाधिकार और पुलिस- अक्षेन्द्र नाथ सारस्वत*